इन्दिरा गान्धी राष्ट्रीय कला केन्द्र

पूर्वक्षेत्रीय केन्द्र, वाराणसी

कलाकोश प्रभाग के २७वाँ स्थापना दिवस समारोह

विगत ३१ जुलाई, २०१५ गुरुपूर्णिमा के पावन अवसर पर इन्दिरा गान्धी राष्ट्रीय कला केन्द्र, पूर्वक्षेत्रीय केन्द्र, वाराणसी के सभागार में सायंकाल ३ बजे कलाकोश प्रभाग के २७वाँ स्थापना दिवस आडम्बर के साथ सम्पन्न हुआ। इस उपलक्ष्य में एक विशेष व्याख्यान आयोजित था, जिसमें प्रसिद्ध कलाइतिहासविद प्रो० रमानाथ मिश्र, पूर्व अध्यक्ष, कलाइतिहास विभाग, जिवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर को विशिष्ट व्याख्यान देने के लिए आमन्त्रित किया गया था। उन्होंने **"विन्ध्याटवी के कलाओं के परिप्रेक्ष्य में मुनि एवं मठ"** विषय पर एक अत्यन्त सारगर्भित व्याख्यान प्रस्तुत किया। सभा की अध्यक्षता प्रो० पी० के० मुखोपाध्याय, पूर्व अध्यक्ष, दर्शन विभाग, जादवपुर विश्वविद्यालय, कालकाता ने किया। सभा में उपस्थित अन्य विद्वज्जनों का विवरण निम्नवत् है–

१. प्रो० एम०एन०पी० तिवारी
२. प्रो० कल्याण कृष्ण
३. प्रो० कृष्णकान्त शर्मा
४. प्रो० कमल गिरि
५. प्रो० विदुला जायसवाल
६. प्रो० कौशलेन्द्र पाण्डेय
७. प्रो० उपेन्द्र पाण्डेय
८. डा० विश्वनाथ पाण्डेय
९. डा० सुकुमार चट्टोपाध्याय
१०. डा० अमलधारी सिंह
११. डा० डी०पी० शर्मा
१२. डा० एस०पी० पाण्डेय
१३. डा० राहुल कुमार सिंह
१४. डा० श्रीनेत्र पाण्डेय
१५. डा० ओमप्रकाश सिंह
१६. श्री राजेश कुमार चौबे

एवं इन्दिरा गान्धी राष्ट्रीय कला केन्द्र, पूवक्षेत्रीय केन्द्र के सभी सदस्यगण।

अनुष्ठान का शुभारम्भ डा० नरेन्द्रदत्त तिवारी के वेदपाठ से हुआ। प्रो० मिश्र एवं आगन्तुक विद्वानों का स्वागत प्रो० कमलेशदत्त त्रिपाठी, परामर्शदाता, इन्दिरा गान्धी राष्ट्रीय कला व न्द्र, पूर्वक्षत्रीय केन्द, वाराणसी ने किया। वक्ता का परिचय पो० मारुतिनन्दन तिवारी ने दिया। डा० प्रणति घोषाल ने इन्दिरा गान्धी राष्ट्रीय कला केन्द्र, पूर्वक्षेत्रीय केन्द, वाराणसी के द्वारा पिछले एक वर्ष में सम्पन्न की गयी गतिविधियों का विवरण प्रस्तुत किया।

तत्पश्चात् प्रो० आर० एन० मिश्र ने 'अटवी' तथा 'आटविक' की संज्ञा पर प्रकाश डालते हुए व्याख्यान प्रारम्भ किया। तदनन्तर उन्होंने 'अटवी' के पर्यायवाची कुछ शब्द हमारे सामने रखे, जैसे – अरण्य, कान्तार, महारण्य, महाकान्तार आदि। इसके पश्चात् लगातार व ई मानचित्रों के माध्यम से उन्होनें व्याख्यान के भौगोलिक अवस्थान अर्थात् विन्ध्यपर्वत एवं तत्संलग्न अंचल को स्पष्ट किया। आटविक जनों की यही मातृभूमि थी। यहाँ दो श्रेणो के लोग मूलत: निवास करते थे – संसारविरक्त मुनि एवं आटविक अर्थात् वनांचल की भूमिज संतति। यही दोनों समुदायों का समग वनांचल के ऊपर स्वामित्व था। वे मठों की स्थापना की जिस उन्होनें 'तपोवन' की संज्ञा दी। वहाँ के

अधिवासियों को 'प्राणी' एवं 'प्रजा' कहा। अरण्यांचल के अधिवासी होते हुए भी वे निरक्षर नहीं थे। ग्रन्थों में उनका वर्णन 'शस्त्रशास्त्रविशारदाः' के रूप में पाया जाता है। अर्थात् वे युद्धकला एवं शास्त्र चर्चा दोनों में पारङ्गत थे। वे इस अंचल के वनभूमि एवं वनज सम्पद् दोनों को अपने स्वामित्व में रखते थे एवं उसकी सुरक्षा के वारण उसे निर्दिष्ट संस्था का रूप देना चाहते थे। इसी उद्देश्य से विविध मठों की स्थापना हुई थी। तत्पश्चात् शृङ्खलाबद्ध 'स्लाइड शो' के द्वारा प्रो० मिश्र नें इस वनभूमि तथा इसके अधिवासियों के जीवन शैली एवं उसके विभिन्न परिदृश्यों पर प्रकाश डाला। महाभारत, अर्थशास्त्र, पुराण, हर्षचरित एवं मालतीमाधव आदि ग्रन्थों के सन्दर्भों से उन्होंने स्पष्ट किया कि पाया जाता है कि विन्ध्याटवी का इलाका इन लोगों की मातृभूमि था। उन्होंने कुछ आटविक प्रदेशों का गठन भी किया थे। प्रो० मिश्र के वर्णनानुसार इतिहास के गुप्त काल तक ऐसे १८ आटविक प्रदेशों का वर्णन मिला है। ये आटविक जन आदिवासी तथा आर्थिक दृष्टि से निम्नवर्ग के थे। कारण दसवीं शताब्दी तक यहाँ वर्ण-जाति का कोई नामोनिशान नहीं था और न ही किसी चक्रवर्ती सम्राट ने यहाँ राज किया।

ये मुनि एवं आटविकजन दोनों मिलकर आटविक प्रदेश को नियन्त्रण में रखते थे एवं मठ स्थापना करके अपने परिश्रम के द्वारा उस स्थान को उन्होंने पशु, धन-धान्य एवं रत्नों के द्वारा समृद्ध किया। उन्होंने पथ, घाट, जलाशय एवं मन्दिरों के निर्माण भी किया। स्थानीय व्यवसाय के ऊपर नियन्त्रण भी उन्हीं के हाथों में था। इसी से स्थानीय अर्थनीति के गठन में उनका अवदान सामान्य नहीं कहा जा सकता है।

इसके उपरान्त प्रो० मिश्र ने 'स्लाइड शो' से उन लोगों का गोपाचल प्रदेश में सौध एवं मन्दिर निर्माण तथा स्थापत्यकला के बारे में श्रोताओं को परिचित कराया। उनके कथनानुसार ये सारे कार्य मुनिजनों के पृष्ठपाषकता के बल पर ही हुआ था। इस कार्य म किसी राजवंश का कोई योगदान नहीं था। वहो लोग मठों के अधिपति भी थे और वे लोग पति, नाथ, पाल आदि नामों के द्वारा जाने जाते थे। तपस्वी निर्मित कला में आटविक प्रतीकों की प्राधान्य दिखता था। तपस्यासम्बद्ध मूर्तियाँ, शैव सम्पदाय की मूर्ति एवं प्रतीक, योद्धाओं की मर्ति जैसे कार्तिकेय के साथ युद्ध मुद्रा में स्त्री- मूर्ति भी मिली है। ये सारी मूर्तियाँ उन लोगों के स्थापत्य एवं भास्कर्य कला के निदर्शन हैं यह कहने से अतिशयोक्ति नहीं होगी। किसी-किसी जगह पर मठों में कुछ राजाओं के नाम भी मिले है। जैसे- अवन्तिवर्मा (नवीं शताब्दी), नृप चक्रवर्ती एवं धमशिव (१०वीं शताब्दी), युवराजदेव एवं प्रभुशिव (१२वीं शताब्दी)। इसके पश्चात् उन्होंने कड़वाहा मठ, सुरवाया मठ, तेरही मठ एवं उसकी संरचना के बारे में बताया। इसके विविध अंशों की गठन-शैली से उस समय का अत्युच्च शिल्पकौशल का परिचय मिलता है। कोदाल मठ एवं इसके भूगर्भस्थ कोठरियों के दृश्य से अनुमित होता है कि ये कोठरियाँ अनाज-भण्डार एवं कोषागार को सुरक्षित रखने के लिए व्यवहृत होती थीं। इस सन्दर्भ में अत्यन्त उल्लेखनीय बात यह है कि इन सभी स्थलों का निर्माण कुशल अभियंता अथवा शिल्पियों के द्वारा न होकर मुनि सम्प्रदाय एवं उनके शिष्यों द्वारा सम्पन्न हुआ था। जगह-जगह पर स्थानीय लोगों की सहायता भी वे लोग लिया करते थे। इसके अतिरिक्त प्रो० मिश्र ने धुबन, नोथा एवं सोहागपुर के मान्दरों के चित्र भी प्रस्तुत किया। जहाँ मिली मूर्तियों में कार्तिकेय, पञ्चाग्नि तपस्या में लीन पार्वती के साथ-साथ भैरव, बेताल एवं प्रेत-प्रेतनी की मूर्तियाँ भी थीं। इसी से उनलोगों के सम्प्रदाय में देवता के साथ साथ उपदेवता का सहावस्थान भी दृष्टिगोचर होता है। नर्तनरत प्रेत एव चामुण्डा की मूर्ति, देवी विकतज्ञा, देवी ओमा, दयावती एवं तरला की मूर्तियों के उत्कीर्णन भी मठों व अभ्यन्तर भाग की भित्तियों में देखा गया। इससे अनुमित होता है कि ये उपजातियों के देव मूर्ति के निदर्शन हैं। कारण ऐसी कोई देव देवी की मूर्ति के नाम संस्कृत ग्रन्थावली में नहीं मिलत। न तो इन मूर्तियों के गठन शैली के साथ भारतीय मूर्तिकला के वैशिष्ट्य म भी समानता मिलती है। लेकिन अभिलेखों में इनके सन्दर्भ मिलने के कारण इन सबों का अस्तित्व नकारा नहीं जा सकता।

व्याख्यान के उपरान्त प्रो० कमल गिरि एवं प्रो० विदुला जायसवाल ने इसके ऊपर परिचर्चा की। सभाध्यक्ष के रूप में प्रो० पी० के मुखोपाध्याय अपने व्याख्यान प्रस्तुत किये। अन्त में संस्था के परामर्शदाता प्रो० कमलेशदत्त त्रिपाठी के धन्यवाद ज्ञापन से अनुष्ठान की समाप्ति हुई।

रजनीकान्त त्रिपाठी